नुष्य बनो

नव
१९८

वा०मू०
१०-००

गति

शुभ संकल्प,

प्रेम,

म कर्म,

ब्रह्मचर्य

फकीर चन्दजी

ता मन्दिर होशियार

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टि-कोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है। मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायगा।

४—किसी धर्म, पंथ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जॉय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ साफ अवश्य लिखना चाहिये। उत्तर के लिये जबावी कार्ड आना चाहिये वी० पी० पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायगी। इसका वार्षिक मूल्य १०—०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुँचे तो पहले अपने यहां डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर मिले व अगला अङ्क निकलने से एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजने चाहिये। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ साफ लिखना चाहिये। और पते की तबदीली भी।

प्रकाशक

ओ३म् पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्ण मदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

❋ मनुष्य बनो ❋

वर्ष ३३ | पौष संवत २०४० वि० | अङ्क ४

शब्द

साधो सतगुरु मरम जताया ॥ टेक ॥

आसन मारा घट के भीतर, कहीं गया नहिं आया ।
हाथ-पाँव को कौन हिलावे, सहजहिं योग कमाया ॥१॥

पंगुल बनकर परबत लांघै, ब्रह्म शिखर चढ़ आया ।
गूंगा बहु विधि वाणी बोले, अनहद नाद बजाया ॥ २ ॥

बिन कर कर्म करुँ मैं सब बिधि बिन पग पन्थ में आया
बिन जिभ्या रस स्वाद लेत हूँ, सत गुरु कीन्हीं दाया ॥३॥

जहाँ मन जाय लगे तहाँ उनमन, सुन्न समाध रचाया ।
भँवर गुफा की दुर्गम घाटी, तोड़ सत्त पद पाया ॥ ४ ॥

भव दुख से नहिं हूँ दुखारी, गुरु पूरे का आज्ञाकारी ।
बलिहारी भक्ती साज सजाया ॥५॥

प्रवचन

इन्दौर (प्रातः २७-२-६२)

कल के सत्संग में कर्म का फल वर्णन किया गया था। जैसी करनी वैसी भरनी। दयाल पुत्री ! (लीलावती) मेरे भाषण को सुना करो। शान्ति मिलेगी। सन्त मार्ग शौबदे बाजो नहीं है। मैं जो कुछ कहता हूँ किसी मन्तव्य से कहता हूँ। दयाल पुत्री (लीलावती) की लड़की की दशा देखी। पता लगता है कि काल चक्र से बचना महा कठिन है मगर लोग तो इतने फँसे हैं कि निकलना नहीं चाहते किन्तु फसना चाहते हैं यही बात स्वामी जो ने कही है। वे उदासीनता और विवशता की दशा में कहते हैं:—

मैं कहूँ कौन से भाई। कोई मेलो नजर न आई ॥

हृदय में एक भावना थी कि काल और माया के चक्र से कैसे निकलूँ। सवाल है कि क्या तू निकल गया ? हाँ मैं पाँचवे पद तक गया हूँ। वाणी है: —

अरे मन देख कहां संसार। झूठे भरम हुआ बीमार ॥
भरे तेरे मन में सभी विकार। जतन से इनको दूर निकार ॥
होय फिर झूठा जगत असार। गहो फिर गुरु के चरन सम्हार ॥
मिले तब उनसे नाम अपार। देख फिर घट में मोक्ष दुवार ॥
चलो फिर शब्द विचार विचार। पाओ एक शब्द सार का सार
पड़े क्यों भट को नैनन बार। झांक तिल खिड़की उतरो पार ॥
गुरु से लेना युक्ति यार। गुरु बिन नहीं खुले यह द्वार ॥
कमाना जुक्ती तुम कर प्यार। लगाना सुरत सहज मन मार ॥
चले फिर सूरत धुन की लार। चुये जहां पल पल अमृतधार ॥
नाम रस पियो रहो होशियार। ऋद्धि और सिद्ध रहें तेरे द्वार ॥
करो मत उनको अंगीकार। वहां से आगे धरो पियार ॥
चलो और देखो घट का सार। पहुँचना राधा[illegible]

मुझे अब संसार नहीं भासता । मैं स्वप्न की हालात में रहता हुआ स्वप्न में स्वप्न देख रहा हूँ। दृष्टि में दुनियां का अस्तित्व नहीं रहा। सांप मर गया, पूंछ हिलती है। यह मेरी दशा है। मैं राधास्वामी के दरबार में पहुंच गया। लोग हैरान होंगे। कि मैं यह क्या कह रहा हूँ। शब्द जाल में फंसकर राधा-स्वामी धाम को लोगों ने हौवा समझा हुआ है। चौथा पद या राधास्वामी दरबार क्या है ? जो समझा वह कहता हूं। मुझे यहाँ पहुंचाने वाले सत्संगी हैं। दाता दयाल ने मुझ पतित को यह आचार्य पद दिया था। मैं कैसे पहुँचा वह बताता हूं। सत्संगियों के अनुभवों ने कि मैं उनके अन्दर प्रगट होता हूं और उनको हिदायत देता हूं, दवा बताता हूं आदि आदि बातों ने मुझे विश्वास करा दिया कि असलियत क्या है क्यों कि मैं उनके अन्दर नहीं जाता। फिर यह कौन है जो उनके अन्दर जाता है यह उनका मन है। जब सुरत उनसे बंधी है तो इस चक्र से कभी नहीं निकल सकती । इसके समर्थन में स्वामी जी का शब्द है:-

देखो गगन के बीच श्याम कुंज खिल रहा।
भंवरा गया लुभाय वही चढ़ के मिल रहा ॥१॥
धोखे का यह मुकाम इसे देखता रहा।
बहु सिद्ध नाथ जोगी, उन्हें पेखता रहा ॥२॥

क्यों देबीचरन ! तुम्हारा सवाल था कि तुमने इस राज को क्यों खोला ? तुमको इसका उत्तर मिला या नहीं ? यदि मैं न खोलता तो और कौन खोलता ! सार बचन में माया संवाद में स्वामी जी की वाणी है। उसमें मबका खंडन है। वहाँ माया का रुप प्रश्न और उत्तर के रूप में है। माया कहती है कि आपने उद्धार का रास्ता सरल कर दिया । अब उसे बन्द जब सब जीव तेरे हैं तो मैं भी तेरी हूं। स्वामी जी

कहते हैं कि ऐ माया ! मैंने तेरे सब छल बल तो ले । मेर जीव तू नहीं ले जा सकती । वह सत लोक जायगा । लोग दूसरों से गलत प्रोपोगन्डा कराते हैं । मै अपना प्रोपोगडा आप करता हूं

राधा आदि सुरत का नाम ।
स्वामी आदि शब्द पहचान ।।

तुम सब राधास्वामी हो । जगत में दयाल का अवतार आता है और वह जीवों को समझाकर अपना जैसा बना लेता है । मैं तुमको निकालने आया हूं । कैसे निकालूँगा ! फूँक नहीं मार सकता । मेरे वचन को पकड़ो और उसके अनुसार चलो बात को समझने की काशिश करो । तुम समझते हो कि रुपया दे दिया या फूल प्रसाद दे दिया और कल्याण हो गया । गुरु सेवा क्या है ? तन, मन, धन की, मगर जब तक बुद्धि ऊँची नहीं होती चाहे तुम तन दो, धन दो, काम नहीं बनता । असली सेवा है:—

दशन करे वचन पुनि सुने ।
सुन २ कर नित मन में गुने ।।
गुन गुन छाँट लेय तिस सारा ।
सार धार तिस करे अहारा ।।

यह है असली सेवा । यह ही मेरा जीता जागता वचन है जो मनन और निधिध्यासन करेंगे इससे लाभ उठायेंगे । दुनियादार इससे लाभ नहीं उठा सकते । स्वामी जी का कथन है—जर जन जमीन की चाह तकदीर के हवाले करो । तब इस लाइन पर आओ । साथ ही सत्संग भी करो । क्या इन्होंने ऐसा किया हुआ है ? दुनियाँ नाम के पीछे पड़ी हुई है । नाम का प्रवाह चल रहा है । कितने इस तरह नाम लेने से तर गये ? यह सोचो ! मुबारिक हैं वह लोग जिनको सन्सकार दिया हुआ है । कुछ न कुछ लाभ तो होगा ही । हाँ, जब तक इन वचनों

के अनुसार जो मैंने कहे हैं न चलो, काम नहीं बनेगा।

जितना अन्तर में दृश्य दिखाई देता है वह काल माया का चक्र है। जब तक वृति देवी देवता गुरु, राम कृष्ण आदि का रुप बनाती रहेगी, मनुष्य पार नहीं जा सकता। इसका प्रमाण यह है कि अभ्यासी कहते हैं कि उनके अन्दर मैं प्रकट होता हूं मगर मैं अन्दर नहीं जाता। इसका परिणाम यही निकलता है कि जैसा जैसा भाव जिसका है वैसी ही रुप वह बनाकर उसके पीछे लगता है। उसे वह सत मानता है तो उसका द्वेष भाव नहीं जाता। यही स्वामी जी कहते हैं:—

देखो गगन के बीच श्याम कज खिल रहा।
काल अपना जाल एक, जुदाही बिछा रहा॥
जो जो गये वहाँ, उन्हें उलटा बता रहा।
नाना कला दिखाय, वहीं मोहता रहा॥
सबकी कमाई आप, खड़ा खोंसता रहा।
क्या क्या कहूँ अनर्थ, बहु भाँति कर रहा॥
बिन सन्त सतगुरु वह, सभी को निगल रहा॥

जितने अभ्यासी अपने में इष्ट की मूर्त्ति बनाकर उसके साथ खेलते, आनन्द लेते हैं वह इस मंजिल से परे नहीं जा सकते। ऐ ससार वालो! राधास्वामी मत वालो! जीवन भर अभ्यास किया मगर तुम निकलना नहीं चाहते। वे कहते हैं कि मन नवीनताओं (Varieties) के आनन्द का इच्छुक होता है। यदि बाहर का इच्छुक हो तो अन्तरीय नवीनताओं (Varieties) के आनन्द का भी इच्छुक होगा।

सन् १९०५ ई० इस मत में मैं आया था। इसमें राम, कृष्ण, वेदान्त आदि सबका खण्डन था। उसे सहन नहीं कर सकता था। उस समय यह प्रण किया था कि इस मार्ग में चल कर देखूंगा और जो अनुभव होगा वह बता जाऊँगा।

आज इस कर्म से दुखी हूं। जगह जगह कुत्ते की तरह भोंकना पड़ता है। आप लोग तंग करते हैं। कल शब्द पढ़ा गया था

नर भोगे बारम्बार अवश्य फल कर्म किये का।

मैंने जो प्रण किया था कि जो अनुभव होगा वह बता जाऊँगा वह मेरा ही कर्म मुझे खा रहा है मगर इस कर्म के करने में कोई स्वार्थ नहीं है वरन यह मेरा कर्म और बढ़ जाता।

चौथा पद क्या है ? तन, मन और आत्मा से परे जाना है। जब तक कोई साधन करके इस तन और मन और आत्मा से परे नहीं जाता आवागमन से बच नहीं सकता। इस चौथे पद का संकेत गीता में भी है। राधास्वामी मत वाले अज्ञान से इसे नया मत समझ रहे हैं। इस पद का वर्णन गुरु नानक और संत कबीर की वाणी में भी है। चूँकि यह मार्ग गुप्त था लोग समझते नहीं थे राधास्वामी दयाल ने इस रहस्य को खोलकर प्रगट कर दिया। इस पिंड, अंड और ब्रह्माण्ड से कौन बाहर जा सकता है या ले जा सकता है ? तुम में शक्ति नहीं कि इससे निकल सको। साधारण जीव नहीं जा सकता। सतपुरुष या पूर्ण बलवान गुरु ही सुरत को खींचेगा। किनकी ? जो इच्छुक हैं और जो उस गति को पहुँचना चाहेंगे। पहिले अक्ली तौर से सुझा कर देह और मन की अवस्था का निर्णय कर देगा। इस से वह भव जाल से अक्ली तौर से निकल जायंगे। फिर अमल अर्थात शब्द का साधन करना पड़ेगा।

राधास्वामी मत में (१) पूर्ण पुरुष का सत्संग और अभ्यास बताया गया है। अक्लीतौर से तो सत्संग में भी निकल जा सकते हो मगर साधन किये बिना केवल वाचक ज्ञान रह जायगा। छुटकारा न होगा। जब तक मन में चोर है और भ्रम हैं तो अभ्यास न बनेगा। शंकाये उठेंगी —

आगे न कोई जाय, इसी में भुला रहा।

माया का झूला डाल, सुनन को झुला रहा ।।
द्वारे के पार काहू को जाने न दे रहा ।
फिर भेद व्हां के पार का, सब ही ढ़का रहा ।

परतीत लाना जीवों के वश की बात नहीं। यह गुरु का काम है कि अपनी बात का विश्वास करादे कि जो गुरु कह रहा है सत कह रहा है।

हुजूर सांवलेशाह (व्यास वालों) के सामने जब कोई यह कहता कि आप हमारे अन्दर में प्रगट हुये तो वह कहा करते थे कि मैं नहीं था कोई और था। इसको लोगों ने समझा कि यह अपने आपको छिपाते हैं। जिसने यह समझा कि झूठ नहीं बोलते वह उन पर प्रतीत मगर उनकी संगत से लोगों ने बात को नहीं समझा। मैं उनका सच्चा उत्तराधिकारी हूँ। असलियत को स्पष्ट रूप से समझाना चाहता हूं जिसका तुमको पता नहीं है।

जो जीव अज्ञानी और मूर्ख हैं उनको बच्चे की तरह सहारा दिया जाता है। जैसे बच्चा गिर गया। वह रोता है। माँ बाप ने दिलासा दी। चींटी मर गई। वह दुख भूल जाता है। इसी तरह मैं भी भिन्न भिन्न तरीकों से दिलासा देकर उनको उस गलती से निकालने का प्रयत्न करता रहता हूँ। एक व्यक्ति दुखी होकर मेरे पास आया। कहने लगा अभ्यास नही बनता। मैंने कहा अभ्यास न कर। एक पैसा रोज निकालकर और इकट्ठा करके मुझे भेजाकर। मैं तेरा अभ्यास कर दिया करूँगा सहारे के शब्द हैं। इनमें सचाई नहीं है। कभी दाता दयाल या सांवलेशाह किसी को सहारा देने को कुछ कह दिया करते तो पाप नहीं मगर असलियत नहीं। जीवन बदलता आ रहा है। समय आता है। बिना समय के काम नहीं होता। मैं समझता हूँ कि स्त्रियाँ दुखी हैं। उनकी शिक्षा और है। वे अभी अधिकारी

नहीं हैं ! भावी सन्तान राधास्वामी मत की या मेरी शिक्षा की आगे कदर, करेगी । अतः कर्मभोग वश वर्णन किये जा रहा हूं मगर आप लोग जल्दी न करें ।

करना क्या है ? बुद्धिमान पुरुषों को चाहिये कि अपने आपको देह और मन के चक्र से निकालें और अपनी सुरत को अपने में ठहरावें । जब तुम अकेले में बैठोगे, कुछ सत्संग के दृश्य आवेगे । मुझ में अब भी आते हैं । जिस जिस प्रकार के दृश्य देखते, सुनते, वही सामने आते हैं । फिर वहां न ठहर कर ऊपर जाओ । वहां तुम्हारी अपना आपा है । अपना ही श्वेत प्रकाश है । जो धुन होगी वही सार शब्द है वही नाम है । सुरति उसमें ठहरती है । वह शान्ति का संमुद्र है । वह तुम्हारा रूप है मगर यहाँ तक पहुँचना सरल काम नही है । यहां तुम लोग न ठहर सकोगे । अभ्यास में कार्य व्यवहार घर बार आदि याद आते हैं क्यों कि तुम्हारा मन उनसे बंधा है । यह मार्ग जो मैंने वर्णन किया है साधन और अभ्यास का है । यह मार्ग केवल उनको है जिनको जर, जन और जमीन से आसक्ति नहीं रही है ।

इसका उदाहरण मेरा अपना ही है । स्त्री कई महीने से बीमार है । घर की बहुत सी बातें हैं । १५-२० दिन से बाहर हूं मुझे इसकी कोई याद नहीं आती । यह अधिकार और संस्कार का सवाल है । इस चौथे पम की प्राप्ति के लिये किसी ऐसे पुरुष का सत्संग अनिवार्य है जो इस अवस्था में रहता हो । जो व्यक्ति ऐसे पुरुष का दर्शन करेगा उसकी रेडीयेशन उसमें जायेगी और लाभ प्रद होगी । इस बात को समझाने को मिसाल देता हूँ । गन्दी है शोभा नही देती । एक युवक सुन्दर स्त्री को देख रहा है स्त्री को पता नहीं है कि कौन देख रहा है । युवक का मन उसे देखकर चंचल हो जाता है क्यों कि स्त्री में मनुष्य की वासना की पूर्त्ति का सामान है । इसी प्रकार सत्पुरुष या शान्त निभ्रान्त

पुरुष के दर्शन और रेडोयेशन से दूसरों के दिलों में जो अशान्ति या व्याकुलता है वह दूर होने लगता है। और शान्ति और निर्भ्रान्ति के भाव पैदा होने लगते हैं। यह प्राकृतिक नियम है। मेरे पास अशान्त लोग आते हैं। मैं कह देता हूं कि मेरा ध्यान करो। कैसे कहूं कि मैं अहंकारी हूं। चूँकि आपको कानून कुदरत (Law of nature) का ज्ञान नहीं है, इसलिये बात ठीक समझ में नहीं बैठती।

अब मैं ऊँचा चला गया हूँ। ऋद्धि सिद्धि मुझमें आप आती रहती हैं जो संकल्प होता है वह पूरा होता रहता है। मुझे अपना देखना है न कि तुम्हारे झझटों में फसना है। जो मैं कहना चाहता हूं अधिकारी जीवों को है। उनके आवागमन के चक्र को मिटाना चाहता हूँ। मालिक या किन स्वरूप या जात को किसी रूप में मानो। जो रूप प्रगट होता है उसको जब तक फकीर या गुरु का रूप समझते रहोगे तो उस मंजिल पर नहीं पहुंच सकते। दयाभाव से ऐसा कहता हूँ:—

हम आये आये आये हैं।

मैं यहाँ क्यों आया ? इसलिये कि संसार के जो अशान्त प्राणी काल चक्र में फंसे हैं उन्हें भेद बता जाऊँ।

उसका सुगम तरीका यह है कि जहाँ से नाम लिया है चाहे सनातनी हो, चाहे आर्य समाजी या कोई और उस गुरू को या राम या कृष्ण को, चाहे फकीर या दाता दयाल महर्षि जी को, मानो कि वह चौथे पद का आधार का रुप है। इस विचार से प्रेम करने से कि वह रुप वह है जो अन्त समय आयेगा तो तुम्हारा बड़ा पार नहीं होगा। कबीर साहब का कथन है:—

गुरु को मानव जानते, ते नर कहिये अन्ध।
दुखी होय संसार में, आगे जम का फंद॥
गुरु किया है देह को, सतगुरु चीन्हा नाहि।

भव सागर की धार में, फिर फिर गोता खाहिं ।।

इसको और स्पष्ट समझलो । हमारी माँ है । वह पिता की स्त्री है । जब वह व्यक्ति मां का ध्यान करेगा उसके ख्याल में यह बात नहीं आयेगी कि उसके पिता की माँ के साथ कैसा सम्बन्ध रहा । उनके अच्छे बुरे कर्मो की ओर ध्यान नहीं जाता मात् भाव है । माँ नेष्ठा है । मैं नहीं कहता कि मुझे पूजा । बता दिया कि वह रुप जिसको माना है वह त्रिगुणात्मक जगत से परे रहता है । तुम्हारा फिर कोई अकाज न होगा । इसलिये इस रहस्य को समझलो । दया भाव वश इस रहस्य को खोला है अब मेरी आत्मा पर बोझ नहीं रहा ।

सुगम मार्ग यही है कि अपने अंतर प्रकाश को प्रगट करो । उससे ऊँचा दर्जा शब्द का है । जब तक शब्द ऊँचा अर्थात दसवें द्वारे से आगे का प्रगट नहीं होता तब तक काम नहीं बनता । यह शब्द और प्रकाश तुम्हारी अपनी ही आत्मा है । में जब मन के दर्जे में आता हूं तो दाता दयाल का फोटो बना लेता हूँ वरना नहीं ।

मेरी सुरत स्वयं राधास्वामी है । और तुम भी वही हो । दयाल वही हैं जो दया करता है । बिना मुआवजा चीज देता है मैं बिना कुछ लिये इस रहस्य को बखेरता हूं । लेना कुछ नहीं चाहता । यदि कुछ लेकर दूँ तो दया नहीं हुई यह मुआबजा हुआ । दुनिया को मुफ्त चीज मिलती है तो कदर नहीं करती । मैंने यह वस्तु सिर देकर ली है इसलिये मैं कदर करता हूँ । सन्तों ने पहिले इस भेद को नहीं खोला क्यों कि अधिकारी नहीं थे । मैंने क्यों खोला ! ऐ देवीचरन सुनो । यह तुम्हारी बात का जबाव है । इस जगत में कितने ही मत मतान्तर बन गये । मानव सन्तान आपस में बँट गई । किसने बाँटा अज्ञान ने । सबने अपने को अलग अलग समझ लिया । वास्तव में हिन्दुओं का

उनका अपना मन है। मुसलमानों का खुदा उनका अपना मन है और भी इसी तरह। अपने स्वरुप का ज्ञान न होने से भेद भाव पैदा हो गया और भारतवर्ष भिन्न भिन्न जाति पांति और मत मतान्तरों में बँट गया। नित्य प्रति साम्प्रदायिक झगड़े फिसाद होते रहते हैं। सिक्ख हिन्दुओं से घृणा करते हैं हिन्दू मुसलमानों से और इसी तरह एक दूसरे के विरोधी हो रहे हैं। यहाँ तक ही नहीं ड़ेरे धाम व गद्दियों वाले भी एक दूसरे से घृणा करते हैं। स्वामी जी का शब्द है:—

जग में घोर अंधेरा भारी,
तन में तन का भंडारा।

स्वप्न में तरह तरह की मूर्त्तियाँ मनुष्य देखता है। उनको सत मानकर भटक गया। अज्ञान में फंस गया। इस अज्ञान से निकालने का इलाज है संत मत जिसको राधास्वामी दयाल वर्णन कर गये मगर कुछ पर्दे में रक्खा। अब हमारा राज्य है चूँकि मेरा मिशन जगत कल्याण का है और जगत कल्याण को आया हूँ। इसलिये अपना अनुभव वर्णन कर चला हूं।

हमारा असली देश है त्रिलोकी के परे। सत-चित-आनन्द से परे। हमारा निजस्वरुप, जात या अकाल पुरुष हमारा स्वरुप है। उसके खेल से इस जगत में आगये।

जैसा मैंने कल कहा था कि हमारी सत्ता हमारी सन्तान में है मगर हम अपनी सत्ता से उसको बदल नहीं सकते। हाँ अपनी वाणी और वचन से समझा सकते हैं।

देश में अपत्ति काल है। मैं संत सतगुरु की हैसियत से प्रगटा हूँ। अपनी राय, अपना मत या शुभ भावना दे सकता हूं मानो तो वाह वाह न मानो तो न सही।

कहा गया है— 'गुरु मिले फिर कहा कमाना'। इसका अर्थ लोगों ने गलत लगाया। बहुत से लोग अभ्यास छोड़ बैठे।

यह नहीं समझा कि गुरु का मिलना क्या है ? गुरु नाम है ज्ञान का, समझ का, विवेक का। जब गुरु द्वारा गुरु ज्ञान की प्राप्ति हो जाय तब अभ्यास की जरुरत नही रहती। यह केवल अधिकारियों के लिये है। मेरा मार्ग है— गुरु जो कहें सो हितकर मान। मगर यहाँ इतना कहना जरुरी हैं कि गुरु निस्वार्थ, निष्कपट और सत की अवस्था में रहने वाला हो।

हजारों लोग दो दो घन्टे अभ्यास करते हैं। सिवाय मन के चक्र में रहने के और कुछ नहीं करते। जब तक कोई ऐसी कमाई न करले इस आवागमन से छुटकारा नहीं पा सकता।

जो थी कठिनाईयाँ गुरु दया से सब दूर हुई।
आनन्द भया घट मेरे मैं माया छाया दूर हुई।
मस्त हुई अलमस्त हुआ आपा में पाया ॥
पाकर आकर दोस्तो इस जग को बिसराया ।
कुछ दिन का यह खेल है ना हम तुम भाई ॥
सुरत करो अपने निज घर से,
उसमें जायेगी समाई ॥

हमको तो यह मिला। जो व्यक्ति इन पर विचार करेगा, वह लाभ उठायेगा। जो अनुभव करेगा वह काल चक्र से निकल जायेगा। प्राणी मात्र को शान्ति

सत्संग

(स्थान--- बाबाजी का आश्रम चिढ़ावत)

ता० २८-२-६२ रात्रि

देखो, यह शब्द मौज से निकला है—

जीव चिताय रहे राधास्वामी । सतपुर निजपुर अगम अधामी ॥
भाग उदय उन जीवन भारी । राधास्वामी जिन घर चरन पधारो
कौन कहे महिमा इस औसर । हारे ब्रह्मा विष्णु महेश्वर ॥
इक इक जीव काज किया अपना । गुरु आरत कर हुये अति मगना ॥
गुरु संग हंस फौज चल आई । कर सम्मान हार पहिनाई ॥
भोजन वस्त्र देख सब हरषे । अति कर प्रीति भाव इन परखे ॥
हुये प्रसन्न सतगुरु अविनाशी । दिया दान किया सतगुरू बासी ।
अनधन और संतान भोग रस । जगत भोग और मिला जोग रस
पर किरपा सतगुरु अस रहई । मोह न व्यापे जग नहि फंसई ॥
रहे सुरत निरमल गुरु साथा । शब्द मिले रहे चरनन माथा ॥
अपनी दया से गुरु दिया दाना । सेवक तो कुछ मांग न जाना ॥
दया करें जब सतगुरु अपनी । बिना मांग करवावें करनी ॥
नाम अनाम पदारथ न्यारा । सो सतगुरु दीन्हा कर प्यारा ॥
अब देबे को कुछ रहाई । सतगुरु ही तेरे हुये भाई ॥
राधास्वामी कहा बनाई । सदा रहे सत् नाम सहाई ॥

आप मेरे भाई हैं । मैं गुरु नहीं महात्मा नहीं । न मेरा आश्रम है न कोई चेला । यदि कोई मुझे जबरन गुरु माने तो मेरा कसूर नहीं । मेरा जन्म ब्राह्मण कुल में हुआ । मुझे मालिक

या परमतत्व जिसे मैं जानता नहीं था, हिन्दू धर्म में जन्म लेने तथा माता पिता के संसकारों से यह ख्याल मिला, कि इस सृष्टि का मालिक कोई है। उसके दर्शन की जिज्ञासा हुई मेरे मन कौं तो तड़प थी वह मुझे स्वप्न द्वारा महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज के चरणों में सन् १९०५ में ले गई।

उस समय मुझे 'राधास्वामी सार वचन', नामी पुस्तक पढ़ने को मिली। पढ़ी। चूँकि ब्राह्मण कुल में जन्म था, राम व कृष्ण का मानने वाला था और इस पुस्तक में सबका खंडन था, किसी को छोड़ा नहीं गया था, मेरे मन में ख्याल आया कि कहाँ फंस गया। कोई आदर्श का खंडन सुनने को तैयार नहीं होता। जहाँ किसी का मन लगा हो उसे छाड़ना नहीं चाहा करता। जो गाने के प्रेमी होते हैं वह बिना गाये नहीं रहते। मैंने दाता दयाल के सामने उस बाणी को गाया और रो पडा। दाता दयाल ने पूछा— ' क्यों ? समझ नहीं आती तो छोड़ दो। फिर कबीर साहब कौ शब्दावली और स्वामी जी महाराज की जीवनी पढने कौ देदी। उस समय मैंने प्रण किया कि जिस तरह हुजूर राय साहब (राय सालिगराम साहब) ने स्वामी जी से प्रेम किया मैं भी करूँगा और जो कुछ राधास्वामी मत से मिलेगा वह संसार को बता जाऊँगा यह मेरा सन् १९०५ ई० का कर्म है और उस कर्म भोग वश दर दर मारा फिरता हूं।

अब मैं कहना चाहता हूँ कि राधास्वामी मत है क्या ! और राधास्वामी दयाल क्या कह गये।

जीव चिताय रहे राधास्वामी।

उन्होंने मुझे क्या चिताया ? और मुझे उससे क्या मिला ! जो मैंने समझा या जो मुझे मिला वह कहता हूँ। किसी ने क्या समझा वह आप बतायें। मुझे यह मिला कि अभ्यास करते करते

देह से निकला। मन से निकला, शब्द को सुना प्रकाश को देखा खोजता रहा कि आगे क्या है। तो एक अवस्था ऐसी आई जहाँ मेरा अपना पता समाप्त हो गया। फिर क्या रह जाता है, कोई शब्द मुझे नहीं मिलते जिससे उसको प्रगट कर सकूँ। स्वामी जी का कथन है—

हैरत हैरत हैरत होई। हैरत रुप धरा इक सोई॥

सनातन धर्म वाले क्या कहते हैं। संसार में उनकी खोज यह है कि सत को असत ने ढक रक्खा था। हमारे अंदर सतपना प्रकाश और शब्द स्वरुप सत है। उसमें आगे चलकर मनुष्य अपना अस्तित्व खोजता है! उसमें एक सर्वव्यापकता आ जाती है जहाँ यह भान होता है:—

नहि खालिक मख़लूक न ख़िलकत।
कर्त्ता कारन काज न दिक्कत॥
ज़ात सिफात न अव्वल आखिर।
गुप्त न परगट वातिन ज़ाहिर॥

यह अवस्था आ जाती है। अब इसमें और संत मत की शिक्षा में क्या अंतर है? हिन्दू ब्रह्म कहना जानते थे इसलिये इस तत्व को प्राप्त न कर सके अन्यथा हिन्दुओं की जाति भिन्न भिन्न वर्ण और सम्प्रदायों में बट न जाती। राधास्वामी दयाल ने पुरानी तालीम अर्थात आदि संस्कृति जिससे दुनियाँ अनभिज्ञ थी चेताकर कहा कि ऐ इन्सान! तू उस परमतत्व अगाध, अपार से निकलकर इस शरीर में आया है। यही अखण्डता है अभिन्नता है। इसमें न कटाक्ष है न सहमति है। मैं जानता हूँ कि इस लाइन में उस समय तक भटकना रहती है जब तक सार वस्तु नहीं मिल जाती है।

अब समझाने वाला कौन था? वह जो इस अवस्था में रहने वाला था। इस वास्ते बाणी में आया है:—

जो चिताय रहे राधास्वामी।
सतपुरु निजपुर अगम अधामा ॥

जो चिताता है वह उस घर का, जहाँ से हम आये हैं वासी अथवा अनुभव सम्पन्न होता है। कोई उसे अकाल कहता है कोई निज पद,अगम परम तत्व आदि। यह अपने अपने शब्द हैं

भाग्य उदय उन जीवन भारी। राधास्वामी जिन घर चरण पधारी ॥

वाणी में लिखते हैं कि जो राधास्वामी के चरणों में आये उनके बड़े ऊँचे भाग्य हैं। क्या यह ठीक है ? हाँ, ठीक है। भाग्य कहते हैं हिस्से को। उदय होना क्या है ? हमारे अंदर शरीर में केन्द्र या चक्र (centres) हैं। जो जो मनुष्य अपनी सुरत को इन चक्रों में ले जाता है उनके गुण कर्म में उन्नति होती है। सुरत का खेल ऐसा है। शरीर को लो। छोटा बच्चा व्यायाम करता है। सुरत को भिन्न भिन्न अंगों में (चक्रों) में ले जाता है, उसके वह अंग बलवान हो जाते हैं। राधास्वामी मत की शिक्षा सुरत का खेल है। इस सुरत को सहस्रार या आजना चक्र से लेकर सतलोक आदि तक जाओ। यही तालीम है यही नामदान है। हिन्दुओं में इसको ओ३म् भू भुव स्वः महः जनः तपः सत्यम् के शब्दों में प्रगट किया है। सब का भाव यही कि सुरत को इन दर्जों, श्रेणियों या चक्रों में ले जाओ और अन्तिम पद या स्थान तक पहुंचो। मैं राधास्वामी मत का पक्षपाती नहीं हूँ यद्यपि तालीम इस मत से पाई है। जो इस मत की शिक्षा के अनुसार विभिन्न चक्रों पर जायगा उसका भाग्य उदय हो जायगा।

जो इस शिक्षा को समझकर चित्त वृति को जिस चक्र या केन्द्र पर जमा देगा उस केन्द्र के गुण कर्म और स्वभाव की उसमें वृद्धि होगी। लोग समझते नहीं साधन करते नहीं,

इसलिये सार वस्तु प्राप्त नहीं हो पाती। केवल गुरु गुरू करने से भाग्य नहीं जाग सकता। अपने अपने गुरुओं का सत्संग करो और उनके कथनानुसार अमल करो। यदि तुम्हारा भाग्य न जागे तो फिर मैं जिम्मेदार हूँ। परीक्षा कर देखो। हाथ कंगन को आरसी क्या ?

प्रथम दर्जा श्रेणी या चक्र सहस दल कंवल है। यह हजार पंखड़ियों वाला है। यहां ज्योति चम ती है। यह ज्योति स्वरूप कहलाता है। इसका गुण है रचना करना। जो अपने अन्तर जिस वासना को रखता है और अपनी चित्त की बृति को इस चक्र पर इकट्ठा करता है वह पूरी होनी चाहिये और पूरी होती है। इसके बहुत से अनुभव मेरे अपने हैं और कुछ सत्संगयों के हैं जो इस कथन की पुष्टि करते हैं। वे कहते हैं कि वे बीमार हुये। हमने आपका ध्यान किया। आप हमारे अन्दर प्रकट हुये और दवा बताई। वह दवा खाई और अच्छे हो गये मुझे इन बातों का कोई पता नहीं होता है कि जो अंतर का फकीर अभ्यासियों को बता गया। बात क्या है ? बीमार दुखी होता है। इसको दुख से बचने की चाह होती है। उनकी दुख भरी चाह या वासना ही वैसा रुप धारण करके उसका इलाज बताती है। यह चक्र (सहस दल) स्थूल वासनाओं की पूर्त्ति करने वाला है। फिर विश्वास भी हो कि सन्त मत की तालीम से मनुष्य का भाग्य उदय होगा।

दूसरा स्थान त्रिकुटी—इस स्थान या चक्र पर अभ्यास करने से ज्ञान प्राप्त होता है। मैंने इसकी अनेकों मिसाल अपने सत्संगों में दी हैं। कहीं कहीं मैं अपनी मिसाल दे देता हूं। अब मैं अपनी राय देना चाहता हूं।

यदि कोई कष्ट हो तो वाहय गुरु या मन्दिर में प्रार्थना करों यह वासना सहस दल कंवल पर किया करो। सरल नुसखा है।

एक व्यक्ति होशियारपुर में था। गाँव का रहने वाला था। उसकी भाबज घर से भाग गई। दुखी हुआ। उसने मेरा ध्यान किया। उस अवस्था में उसे कहा गया कि तीन रफ्ते के बाद स्वभ् आ-जायगी। दूसरों को न बताओ। मैंने किसी को नहीं बताया। इन्तजार करता रहा। वह वापिस आ गई। वह फिर २०-२५ सेर प्रसाद लेकर आया तो मैंने पूछा कि यह क्यों लाया है तो उसने सब हाल कह सुनाया। मैं उसे जानता भी नहीं।

मैं महात्मा प्रतापदास (उस आश्रम के आचार्य) का आदर करता हूं। मेरे जैसे को सचाई बर्णन करने को कोई महात्मा अपने स्थान पर इजाजत नहीं देता। मुझसे तो वे विरोध करते हैं

यदि राधास्वामी मत की तालीम में मुझे कोई गलती दिखाई पड़ती तो मैं धज्जियाँ उखेड़ जाता। मगर विवश हूं कि कबीर मत नानक और राधास्वामी मत में एक शब्द भी झूठ नहीं। तुम आजमायश कर देखो। तुमने सन्त बाणी को सुना नहीं। समझा नहीं गुरु पशु हो गये, इस लिये वे क्या चितावनी दे गये कि वही बड़ा भाग्यबान है जो सन्तों का सत्संग कहते हैं। और उनकी बात को सुनकर, समझकर अमल करता है।

राधास्वामी मत मंत्राण। देता है कि भाग्य बढ़ाने को अथवा सांसारिक कष्ट को दूर करने को कुछ न करो उस वस्तु की इच्छा करो, चिन्तन और मनन करते रहो। माँगों और मिलेगा

साई के दरबार में कमी वस्तु की नाहिं।
बन्दा मौज न पावहीं चूक चाकरी मांहि॥

गलती क्या है ? वह प्रकृति के नियम को सही समझते। जो तरीका बांछित वस्तु प्राप्त करने का है वहां गलती खा जाते हैं। वह तरीका है चित्त की वृति को सहस्र दल कंवल पर एकाग्र

करो। जो लोग नियत स्थान पर ध्यान नहीं करते या ऊट पटाँग करते हैं उनको सफलता नहीं मिलती। when there is a will there is a way जो लड़का कालिज में पढ़ता है और पढ़ने पर ध्यान नहीं देता उसको विद्या नहीं आ सकती लोग दुनियाँ की आशाओं में ग्रस्त हैं। उनकी समझ में चौथे पद की बात नहीं आयेगी। अय मैं प्रसंग के अनुसार मतलब की बात बताता हूं। मुझे चितावनी मिली और मेरा भाग्य उदय हो गया।

मेरा शरीर ७५ वर्ष का है। मैं जवानों से बहतर हूं। मेरा लड़का ८०० /९००) रु० तनख्वाह पाता है। भाई २५००)रु० की तनख्वाह से रिटायर हुआ है। मकान है स्त्री है। किसी का कर्जा नहीं देना। मन में शान्ति रहती है। चिन्ता नहीं सताती मुझे ईश्वर या मालिक के मिलने को भी चिन्ता नहीं सताती। यह किसने किया। यह मेरा भाग्य उदय हुआ। गुरु आज्ञानुसार चला। गुरु ने नाम दिया था। तुम पांच नाम के मानने वाले हो सहस्राकार, ओंकार, एवं सोहं सत्यम्।

इसका अर्थ कि चित्त की वृति इन स्थानों पर ठहराओ। यही नाम तुमको मिला था।

यही नाम तुम्हारी सहायता करेगा।

नाम है वृति का एकाग्र करके इन चक्रों पर ठहराना। नाम है ख्याल देना संस्कार, भाव, हित, या मत देना। इसका नाम नाम दान है। मैं कमरा बन्द करके नाम नहीं देता। कोठा बन्द करके नाम देने में उसका फल अधिक, भक्ति भाव रखता है किन्तु उस नाम के देने में एक नुक्स देखा। पुरुषों साधुओं और स्त्रियों को इकठ्ठा एकान्त में साधन करना गलत है। सब राधास्वामी (गति वाले) नहीं हो सकते।

स्त्री जाति का गुरु स्त्री होना चाहिये, क्योंकि उसमें प्रेम का

भाव अधिक होता है। स्त्रियाँ अज्ञानवश अथवा प्रेम वश भावुक रुप से सेवा करने को मजबूर हैं, जिस तरह बच्चा मां से प्रेम करने को मजबूर है। बच्चे को होश नहीं कि अपना हाथ कहाँ डाल रहा है क्योंकि वह अज्ञानी है। जो स्त्री अज्ञानी है वह प्रेम भाव में साधुओं के चरणों में लिपटती है। नतीजा अधिकतर खराब होता है। यह मैं अपने भाइयों और बेटियों के हित के लिये कह रहा हूँ।

जब मैं होशियारपुर में था तो दो व्यक्ति सत्संगी आये। उसकी स्त्री को भूत लगता था। पूछा क्यों आये तो उन्होंने कहा कि स्त्री को भूत लगता है। दोनों को देखा। मैंने पूछा कि मेरे पास क्या समझकर आये हो। कहा संत समझकर। मैंने कहा तो मेरे सामने सच बोलना। झूंठ बोले तो कोढ़ी हो जाओगे। मैंने आदमी से कहा कि तू नामर्द है। उसने स्वीकार कर लिया। फिर उस स्त्री ने भी स्वीकार किया कि उस साधु ने जिसके सत्संग में जाती थी उसका सतीत्व नष्ट किया है। मैं इस भूत के रहस्य का ज्ञाता हूँ। मैंने कहा कोई भूत बाहर से नहीं आता है। चूंकि इस स्त्री को अपने जीवन में इस काम की चेष्टा की पूर्त्ति का पहिले अनुभव नहीं हुआ था, वह भाव शक्लें बना बनाकर सामने आते हैं। इसलिये स्त्रियाँ पुरुषों का सत्संग चाहे सुनें मगर उनको गुरु न बनायें मगर जब तक गुरु सेवा नहीं की जाती काम नहीं बनता तथा मन निर्मल नहीं हो सकता। इश्के मजाजी से इश्के हकीकी — इसका अर्थ लोग गलत लगाते हैं। इसका भाव है सगुण रूप की सेवा। जब तक सगुण रुप की सेवा नहीं तब तक सुन्न तक नहीं पहुँच सकते। युवा स्त्री आती है। प्रेम से गोद में चिपट जाती है वेसुधि हो जाती है। किसी को क्या पता कि किसी के मन की अवस्था कैसी है। यदि उस गुरु का मन गन्दा हैं तो आप डूबा तो डूबा उस स्त्री को भी

डुबा दिया। यह महात्माओं का दोष है। स्त्रियों के परिवार वालों में तरह तरह के शुभा पैदा होते हैं। महात्मा सच्चा और शुद्ध पवित्र भी हो तो भी दुनियाँ लांछन लगाती हैं।

दाता दयाल के साथ तारा देवी रहती थी। वह जब सुनाम स्टेशन पर मेरे पास आये, लोगों ने तरह तरह के लांछन लगाये कि बुढ़ापे में और युवा स्त्री संग ! ये बातें दाता दयाल से कही गई। उन्होंने कहा कि उसका रखना मजबूरी है। मेरे पास भिन्न भिन्न तरह की स्त्रियाँ आती हैं अगर यह होती है तो मध्यवर्ती (media) बन जाती है। इन टीका टिप्पणियों के कारण मैंने कोई चेली नहीं बनाई। अशान्त जीव आते हैं। चिपट जाते हैं। उनको सहारा मिलता है। एक बार मेरे घर पर युवा स्त्री आई। मेरे गले में चिपटकर रोने लगी। मेरी स्त्री देख रही थी। मेरी स्त्री ने बुलाया कहा कि तुम पर कोई तो शंका नहीं मगर तुम लड़कियों वाले हो, सकुच किया करो। देखो वह लड़की गले में जफ्फी डाल रही थी। कहने का अभिप्राय यह है कि स्त्रियों का गुरु स्त्री होना चाहिये। स्त्रियों को किसी पुरुष को उस समय तक गुरु न बनाना चाहिये जब तक पूरा विश्वास उसके बारे में न हो जाय। वे पुरुषों का सत्संग सुन सकती हैं।

सन् १९३३ ई० की बात है जब दाता दयाल सुनाम स्टेशन पर आये थे। उस समय उन्होंने कहा था कि फकीर ! जमाना बदल जायगा। मेरी शिक्षा शैली भी बदल जायगी। तुम तालीम में परिवर्तन कर जाना। मैं जगत गुरु की हैसियत में प्रगट हुआ हूँ और तुमको चिताने आया हूँ:—

जीव चिताय रहे राधास्वामी।
सतगुरु निजपुर अगम अधामी ॥

गुरु नानक का कथन है:—

सत पुरुष जिन विवेकिया, सत गुरु तिस का नाम ।
तिस के संग शिष ऊबरे, नानक हरि गुण गान ॥

जिसने सत् पुरुष को समझ लिया अर्थात जिसने उनके बचनों को सुन लिया , मनन कर लिया और जान लिया तो उसका भाग्य जाग जाता है । सुखमणि साहब की बाणी है—

जीभा एक स्तुति अनेक । सतपुरुष है पूर्ण विवेक ॥

मगर यह ज्ञान बुद्धि में नहीं आ सकता । बुद्धिगत ज्ञान केवल देखने, सुनने छूने चखने तक सीमित है । यह ज्ञान पूर्ण नहीं । पूर्ण ज्ञान उस समय होता है जब कोई व्यक्ति अंतर में सब श्रेणियों को अभ्यास द्वारा पार करके देखता व छूता है । हर एक व्यक्ति पूर्ण ज्ञानी नहीं है ।

लोग दुनिया के मारे आते हैं कि बाबा जो कह देता है वह हो जाता है । फिर मेरी स्त्री इतने दिनों से रोगी वह क्यों नहीं अच्छी होती ? इसलिये तुमको मैं रहस्य बता रहा हूँ । अपना अनुभव ज्ञान प्रकट कर रहा हूँ ।

यदि कोई भेद दाता या ज्ञान दाता की दृष्टि से मेरा मान करता है तो वहां तक ठीक है मगर कोई इस दृष्टि से मान करता है कि मैं उनके अन्दर प्रगट हाता हूं तो गलत है ।

ऐ भोले भक्तो ! तुम लुटे जा रहे हो । इसी अज्ञान को दूर करने को राधास्वामी, नानक साहब और कबीर प्रकट हुये । वह क्या कह गये ? यहीं कि काल माया ने तुमको जकड रक्खा है । काल है मन और माया है बुद्धि । सब के सब इन्ही के फंदे में है

तुम्हारे जीवन को बनाने वाला काल अर्थात् मन हैं । जैसा काल वैसा हाल । मन के चक्र से निकलने का उपाय है शिव संकल्प मस्तु । सहस दल कमल, त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न और भंवर गुफा तक अवस्थायें माया हैं ।

मन पर काबू पाओ और दूसरों की आशा छोड़ो मगर तुम

निर्बल जीव हो बिना सहारे रह नहीं सकते, इसलिये सहारा प्राप्त करने को जहाँ तुम्हारा विश्वास हो, उसकी उपासना करो चाहे राम की चाहे कृष्ण की, चाहे किसी गुरु की । वह रूप तुम्हारा सहायक होगा । तुमको अपने भाग्य को जगाना है । अपनी चित्त वृति को अन्तर में लगाओ और एकाग्र करने का प्रयत्न करो । बाहर की सेवा अज्ञान के अन्तरगत है है अर्थात् जब तक है जब ज्ञान न हो मगर जीव सेवा करने को मजबूर है स्त्रियों की सगुण सेवा पति की है । युवकों को माता पिता की सेवा है, दीन दुखियों की सेवा है मगर यह सेवा निष्काम भाव से होनी चाहिये ताकि मन शुद्ध हो जाय ।

मैं दाता दयालल का धोती रोते रोते आँसुओं से भर देता था वे संकेत रूप से माया का रूप समझाते रहते थे । मगर मैं समझता था कि यूहीं कहते रहते हैं ! मुझमें उनका रूप प्रगट होता और सहायता करता था । सन् १९१४ ई० के युद्ध में जब हम घिर गये तो ब्रिगेडीयर को तार दिया कि अगर मदद यानी फौज न आई तो सब मारे जयेंगे । बहुत दुखी था । दाता दयाल को याद किया । देखा दाता दयाल सामने हैं । कहते हैं फकीर ! घबराता है ! शत्रु की फौज यदि मुर्दो को ले जाती है तो ले जाने दो । तुम बम मत फैंको । यदि तार को काटकर आयें तो मारो । तुम्हारा कुछ न कर सकेंगे और मौज से ऐसा ही हुआ कि हम बाल बाल बच गये ।

अफ्रीका में मैं एक व्यक्ति के अन्दर प्रगट हुआ था । जब अकेला बैठता हूँ तो अपने से सवाल करता हूँ कि बता तू उसके अन्दर जाता है । यदि इस बात को पर्दे में रखता हूँ तो ऐ एडीटर शिव ! मैं क्या गुनहगार नही होता ! यह भेद या रहस्य है जिसमें कपट नहीं । स्पस्ट कह रहा हूं । जो जैसा होता है उसमें से वैसी ही धारे निकलती रहती हैं । जैसे तुम हो तुम्हारे अन्दर

से वैसे ही ख्याल निकलते रहते हैं। पुलिस के महकमे में कुत्ते रखे गये हैं। जहां कहीं डाका पड़ा और घटना घटी, उनका कपडा, जूता, जो कुछ रह गया उसे कुत्तोंको सुघाते हैं। उसकी गंध जहां जहाँ जाती है कुत्ते वहीं वहीं पहुंचते हैं और उस अपराधी को पकड़ लेते हैं। यह प्रमाण है कि जहाँ जहाँ सतगुरू फिर जाता है उसकी सत्यता की धारें वहाँ फैलती हैं। जो उनका दर्शन करता है प्रसाद पाता है उसका प्रभाव बीज रुप में उसमें जाता है।

सत डारिया बीज, घट धरती जा बीज के।
को समरथ को जारि सके उस बीज को॥

जिसने सत्पुरुष के दर्शन किये, उसके अन्दर उसको रेडीयेशन से उसका कल्याण होता है। कहा जाता है कि जिस घर में सच्चा संत पहुच जाता है उसकी सात पीड़ी तर जाती है। मैं इसे सच्चा मानता हूं। कही वर्षो में पृथ्वी घूमते घूमते सत के सामने जाती है तब सत्पुरुष प्रगट होता है। मैं अभी सौ फीसदी सत्पुरुष नहीं हो सका हूं।

कहने का तात्पर्य कि जैसे तुम वैसे तुम्हारे प्रभाव। दूसरों को उनके विश्वास के अनुसार लाभ पहुँचता है। स्त्री एक है। कोई उसको स्त्री मानता है, कोई बहिन, कोई माँ, कोई कुछ कोई कुछ। जब उसमें माँ का भाव पूर्ण है तो मातृ भाव का फल मिलेगा। पति को काम पैदा होगा। इसी तरह गुरु चाहे कामी या क्रोधी है और तुम्हारा विश्वास उसमें पूर्ण है तो तुम भी तर जाओगे।

हम क्यों माँ को माँ कहते हैं ? क्योंकि यह ध्यान ही नहीं आता कि मां का बाप से क्या सम्बन्ध रहा होगा। फिर गुरु कौन हुआ !

ढूँढ मुझको अपने मन में, मैं तो तेरे पास हूँ (यह शब्द

पहिले आ चुका है) ऐ दामोदरदास ! मुझे क्यों बुलाया ? यदि बुलाया तो तुम्हारी ड्यूटी है कि इस आश्रम को बढ़ाओ। हर एक को कर्जा देना होता है। मैं चाहता हूँ कि इस आश्रम से सचाई का प्रचार होता रहे। पाखंड जाल से नहीं किन्तु सच्चा सौदा गुरु नानक की तरह हो । कहा तो सबने ऐसा ही मगर गुप्त रुप से कहा। मेरी ड्यूटी जगत कल्याण की है। दाता दयाल ने मेरे नाम एक शब्द लिखा था—

तीन ताप से जीव दुखी हैं, निबल अबल अज्ञानी।
तेरा काम दया का भाई, नाम दान दे दानी।

अतः मैं जा कुछ कहता हूं स्पष्ट कहता हूं। मेरी बात को यदि समझ लिया जाय तो आप का द्वेष भाव न रहेगा। सब भाई भाई बनकर रहेंगे ! सत्पुरुषों की संगत और रेडीयेशन से तुम्हारा कल्याण होता रहेगा। कबीर साहब का एक शब्द है:—

झीनी बीनी रे चदरिया ॥
काहे कै बाना काहे कै भरनी, कौने तार से बीनी चदरिया ॥
इंगला पिंगला ताना भरनी, सुषमन तार से बीनी चदरिया ॥
आठ कंवल दल चरखा डोलै, पाँच तत्त गुन बीनी चदरिया ॥
साईं को सियत मसि दस लागे, ठोक ठोक के बीनी चदरिया ॥
सो चादर सुर नर मुनि ओढ़ी, ओढ़िके मैली कीन्ही चदरिया ॥
दास कबीर जतन से ओढ़ी, ज्यों कि त्यों धर दीनी चदरिया ॥

यह शरीर रुपी चदरिया का मैला करना क्या है ? कपट छल, द्वेष, ईर्ष्या, मत्सर, घृणा आदि यह मैल हैं, जिनसे यह चदरिया मैली होती है। मैंने अपने जीवन में छल कपट आदि से काम नहीं लिया। यदि मैं असलियत को छुपाऊँ तो चाहे जितना रुपया लोगों से लेलूँ। रुपया अब भी मेरे पीछे पीछे फिरता है। इन्दौर वाली स्त्री का उदाहरण मैंने बहुत सी बार दिया है कि मरते समय उसने कहा कि बाबा फकी मेरे लेने को

पालकी ले आया है कह रहा है कि राधास्वामी राधास्वामी कहो। राम राम न कहो। मुझे इसका कोई पता नहीं। यदि झूठ कहूं तो चादर मैली की या नहीं ? सच कहता हूं तो विश्वास टूटते हैं।

राधास्वामी मत की तालीम सुरत के द्वारा है। मन के द्वारा भक्ती नहीं सिखाता। राधास्वामी मत को समझा नहीं गया। यह सबका रक्षक है,

राधास्वामी धरा रुप ज़गत में, नर होय जीव चिताये।

जीवित पुरुषों की बात को नही समझा गया। वह क्या समझ देते हैं—

करूँ बंदगी दोऊ कर जोरी।
अरज सुनो राधास्वामी मोरी॥
बारम्बार करूँ परनाम।
सत गुरु पदम धाम सत नाम॥
आदि अनादि जुगादि अनाम।
सन्त स्वरुप छोड़ निज धाम॥
आये भवजल नाव लगाई।
हमसे जीवन लिया चढ़ाई॥
शब्द दृढ़या सुरत बताई।
करम भरम से लिया बचाई॥

तुमको शब्द और सुरत का भेद बताया। राधास्वामी मत का बीज डाला गया। समय आयेगा जब दुनिया समझेगी।

ढूँढ मुझको अपने मन में, मैं तो तेरे पास हूं॥

.....

सुख ले और आनन्द मुझसे, मैं ही सुख की रास हूँ॥

(पूरा शब्द पहिले दिया जा चुका है)

सुखराम कौन है ? वह तुम्हारी आस है। क्या चेतावनीदी ?

भाग्य उदय करने की। दीन दुनियाँ, आनन्द, निर्वारण, सत लोक चाहते हो तो उन्ही स्थानों पर बैठ कर ध्यान लगाओ। मगर तुम कर नहीं सकते। क्यों ?

जो इस मार्ग में आयें वह जर जमीन और जन की चाह मालिक के हवाले करें। ड़ेरों और धामो से बधें नहीं। इनके रु॰ को समझा जाय कि यह किस लिये हैं ? इनको कौन नहीं चाहता ? यदि दस हजार आदमी आजाँ। तो कहां रहें मगर लेगौं की दृष्टि शिक्षा की ओर रहनी चाहिये। राधास्वामी दयाल जो चेतावनी देगये उसे समझा जाय।

जीव चितावन आये राधास्वामी। यह बाणी है। पहिली कड़ी में बताया गया है निज घर कौन है और राधास्वामी किसे कहते हैं।

राधा आदि सुरत का नाम।
स्वामी आदि शब्द पहचान ॥

फिर हर एक व्यक्ति राधास्वामी है। कौन जीव ऐसा है जो इनसे रहित है। जब तुम्हारी सुरत अन्तर में ऊपर को चढ़ती है तो उस मन को जो ब्रह्मा बिष्णु का काम करता है अर्थात् रचना और भरण पोषण का काम करता है उसे छोड़ जाती है इस साधन से आनन्द और शान्ति मिलती है। भाग्य जागता हैं राधास्वामी मत का सत्संगी निर्धन नहीं रह सकता वशर्ते कि वह नियमानुसार चले। जो किसी समय गरीब थे उनके भी कारखाने लगे हैं। यह उनका भ्रम है कि बाबा (मैं) ने फूंक मारदी। उन्हें गुरू बता दिया कि बिचार कैसे करना है जैसी भावना की उसका वैसा फल मिला मगर मुझे मुफ्त में यश (credit) मिल गया। वास्तव में जो तुम हो वही मैं हूँ। कोई अंतर नहीं है। वह एक परमतत्व है जिसके हम सब अन्श

कबीर साहब का कथन है:—

ना कुछ किया न कर सका ना करने योग्य शरीर।
जो कुछ कियो सो हरि कियो, भया कबीर कबीर ॥

मैं भी यही कहता हूँ। बाणी जाल में मत फंसो। तुम दयाल के अन्श हो। साधन करो। यह नही कि मेरा ध्यान करो। पूजो पैसा दो मगर जो उद्धार चाहते हो तो अन्तर मुखी बनो। फिर तुम्हारा कल्याण होगा।

यदि मैं संत हूं तो चाहता हूँ कि यह आश्रम बना रहे। इससे मानवता का प्रचार हो। सच्चाई का प्रचार हो। यदि ऐसा हो तो मान लेना कि संत कुछ होता है या फिर मैं संत नहीं कोरा ढोंग है।

तुमको निबल अबल जानकर,
प्रगटा जग में आन।
चाहता हूं दे जाऊं मैं,
तुमको सच्चा ज्ञान ॥
भूल भरम में सब पड़े,
नहीं नपना नाप पहिचान।
बिना आपा जाने होगा नहि
तुम्हारा कल्याण ॥
दास फकीर मस्त हो
दिल में दर्द को धार।
कह रहा सार भेद को
जो है सार का सार ॥

मानव शरीर में बड़े भाग्य से आये हो। इसे अशुद्ध न करो झूठे मान प्रतिष्ठा को इस चदरिया को मैली न करो। अपने कर्म से कोई नहीं बच सकता। सबको राधास्वमी।

फकीर

गतांक से आगे

द्वितीय सन्देश

खुशी (आनन्द) का उद्देश

१—दुनिया के जिस लोक या भुवन में हम रहते हैं वह कमी और आवश्यकता का लोक है।

२—हमसे प्रत्येक मनुष्य का इष्ट यह है कि न्यूनता अधिकता में बदल जाय अथवा कमी या अपूर्णता का स्थान पूर्णता ले ले। हमारी चाह पूरी हो आवश्यकतायें पूरी हों और पूरी होती रहें।

३—राजा से लेकर भिकारी तक सब को कमी, अपूर्णता और आवश्यकता की शिकायत रहती है और वह शिकायत केवल इस कारण से रहती है कि वह पूर्ण नहीं होती।

४—इनके पूर्ण न होने से कष्ट और दुख होता है। दुनिया बेचैन है सबको अपनी बेचैनी के दूर करके की रात-दिन फिक्र लगी रहती है। वह उसको दूर करने के ख्याल में परिश्रम करते हैं। खैंचातान में पड़े रहते हैं लेकिन यह जीवन-पर्यन्त तक दूर नहीं होती।

५—दुनिया है या बेचैनी ! इससे कोई इन्कार ब कर सकता है। हम दूसरों को कष्ट में देखकर उन्हें धीरज बंधाते हैं, नसीहत करते हैं और समझाते बुझाते रहते हैं। लेकिन जब हमारे सिर पर बला आती है हम बिल बिला उठते हैं। बुद्धि काम नहीं देती। पहले लाख फिलोसफी बघारते रहे हो लेकिन जब दुर्घटनाओं का भारी पहाड़ हम पर आकर गिरा तो फिर सारा मजा किरकिरा हो जाता है और फिलोसफी बघारना भूल जाते हैं।

६—हकीम जब बीमार होता है, आप अपना इलाज नहीं करता। दूसरे हकीम से अपना इलाज कराता है क्योंकि उसकी बुद्धि मारी जाती है और वह काम नहीं करती। जब कोई वकील किसी पेचीदा मुकद्दमे में सम जाता है तो दूसरे वकीलों से मशवरा पूछता है। वह स्वयं दीन और लाचार होता। दुनिया का यही हाल है।

७—आवश्यकता का यह जगत है। जिसे सौ मिलते हैं वह हजार की फिक्र में पड़ा रहता है जिसे हजार मिलते है उसे लाख और करोड़ का सौदा होता है। लालच और तृष्णा हाथ-पाँव बढ़ा लेते हैं। खुशी नहीं मिलती न वह इस धन दौलत को भोग सकते हैं न उसे छोड़ सकते हैं। साँप छछूंदर का हाल हो जाता है।

धन नहीं है पास कंगाली का दुख है रात-दिन।
धन अगर है पास तो लालच में फिर गुजरा है सिन ।।
है दुधारी तेग दुनिया काट इसकी तेज है।
जख्म देती है दिलों को बेगमां खूंरेज है ।।

निन्यावें (९९) का फेर महा दुखदाई है। आगरे में एक मनुष्य रहता था। दिन-भर में एक रुपया कमाता था। शाम को खाता-पीता, हू हक करता। पड़ौस में एक धनी सेठ रहता था। उसकी स्त्री ने उलहना दिया, 'हमारे पास धन हैं मगर खुश नहीं हैं, यह दरिद्री है मगर खुश रहता है"

सेठ ने कहा, "९९ के फेर में नहीं पड़ा।" रात के समय सेठ ने ९९ रुपये की थैली उसके मकान में फेंक दी। उसे मिली। खुश हुआ और उसी समय से चिन्ता हुई कि इसे पूरे सौ कर देना चाहिए। दो दिन में थैली में सौ रुपये हो गये। अब इसकी खुशी गई। वह रुपये के जोड़ने में लगा। ज्यों-ज्यों थैली भरती गई धन के बढ़ाने की चिन्ता भी बढ़ती गई. जो थोड़ी-बहुत खुशी थी लालच ने उसे भी छीन लिया। यह लालच का परिणाम हुआ।

९—खुशी न दौलत में है न मान सम्मान में, न विद्वत्ता में। सच्ची बात यह है कि धार्मिक बन्धनों में भी खुशी नहीं है।

१०—फिर खुशी कहाँ, किसमें और किस बात में है इसका पता लेना प्रत्येक बुद्धिमान मनुष्य का कर्त्तव्य होना चाहिए।

है खुशी किसमें कहाँ रहती है वह ?
क्यों नहीं मिलती हे क्या कहती है वह ।।१।।
हो रही है उसकी बेजा जुस्तजू !
गो है दिल में सबके उसकी आरजू ।।२।।

लो पता उस जा कर फिर ढूंढो उसे !
पूछो और फिर पूछकर खोजो उसे ।। ३ ।।
पाओगे जब तुम खुशीराम होंगे दूर ।
दिल तुम्हारा गम से होगा फिर न चूर ।।४।।
ऐ खुशी ! तेरा है नाम व निशा ।
मैं मिलूँ तुझ से तू रहती है जहाँ । ५।।

—;0:—

तृतीय सदेश

खुशी और दुख

१—जीवन की समझ हर एक को है । विद्या व बुद्धि की समझ हर एक को है और साथ ही खुशी की समझ भी हर एक को हैं ।

२—जो शब्द इतने साधारण हों जिन्हें मामूली बुद्धि का मनुष्य भी समझ सकता है उसकी टीका टिप्पणी और व्याख्या करना व्यर्थ है । सरल और सरलता से समझी जाने वाली बात को क्या समझाया जाय और बात का बतंगड क्यों बनाया जाय ।

३—खुशी प्राकृतिक जगत में व्यापक तत्व है । कोई जगह कोई काम और कोई विचार इससे रहित नहीं है । खाने पीने में खुशी है । मिलने जुलने में खुशी है । लिखने पढ़ने में खुशी है । जागने सोने में खुशी है । खुशी न होती तो हम न खाते पीते, न मिलते जुलते, न पढ़ते लिखते और न सोते जागते । क्या यह सच नहीं है ? यह सच है और इस एक बात में जरा भी झूठ की मिलावट नहीं है । अनुभव बताता है कि यह खुशी झूठ में भी है । झूठ में खुशी न होती तो कोई आदमी कभी झूठ न बोलता ।

४—सब में है और सब में रहती है खुशी ।
सब की सुनती और सहती है खुशी ।।१।।

जिस जगह देखो, खुशी है जा बजा ।
इस से खाली कौन है ? कह दो जरा ॥२॥
जिस्म में दिल में और है रुह में ।
देखो आंखों से दिखायें क्या तुम्हें ॥३॥
अन्तर और जाहिर में रहती है खुशी ।
अव्वल और आखिर में रहती है खुशी ॥४॥

५—सुख में खुशी रहती है । खुशी ही का दूसरा नाम सुख है । यह खुशी दुख में भी रहती है । यदि ध्यानपूर्वक परीक्षण करोगे तो यह दुख और कष्ट के भारी बोझ को हल्का करती रहती है ।

६—खुशी न होती तो एक दम के लिये जीवित रहना कठिन होता । इसी खूशी का दूसरा नाम जीवन है । खुशी जीवन है और जीवन खुशी है ।

७—तुम सम्भव है सवाल करो कि संसार में खुशी अधिक है या दुख अधिक है । मैं कहूँगा हर जगह सुख ही सुख है । दुख नहीं है । जिसे तुम दुख कहते हो वह सुख की उल्टी शक्ल होती है । यदि इसे न समझो तो अपने जीवन के प्रति दिन २४ घन्टे के व्यवहार पर दृष्टि डालो । तुम इन में अधिक सुखी रहते हो या दुखी रहते हो ? ऐसा एक भी व्यक्ति नहीं है जो रात दिन दुखी रहता हो । सोने जागने, बात चीत करने, हंसने खेलने, मिलने जुलने में खुशी ही खुशी तो है । यदि रोते कराहते भी हो तो थोडी देर के लिये । इस से स्वय ही परिणाम निकाल सकते हो कि सुख का पल्ला भारी है । दुख का बहुत हल्का है ।

सवाल— सुख ही सुख होता और दुख नाम के लिये भी न होता तो बहुत अच्छा होता ।

जवाब—न कैसे होता ! एक औघड़ फ़कीर दो खोपड़ियों को हाथ में लिये हुये देख रहा था कि कौन खोपड़ी फ़कीर की है और कौन अमीर की है । कोई राजा उधर होकर निकला ! मुर्दा खोपड़ियों को इसके हाथ में देखकर अफ़सोस के साथ कहने लगा —"क्या अच्छा होता कि आरोग्यता रहती, रोग न रहता ! दौलत ही दौलत होती, दरिद्रता न होती

जीवन होता मृत्यु न होती। "फ़कीर हँसा —" नादान! यदि सब धनी होते तो तेरी नौकरी कौन करता! सब निरोगी होते तो उन्हें सुख दुख की तमीज कैसे होती! जीवन ही रहता और मृत्यु न होती तो तू राजा कैसे होता! तेरा बाप ही राजा बना रहता। जा अपना काम कर तुझे इन बातों का ज्ञान नहीं है।,,

वही तुम्हारी दशा है। धन्यवाद दो कि सुख के साथ दुख और दुख के साथ सुख है।

दिन को काम करो। रात को सोओ। जीओ और मरो। आँख खोलो और बन्द करो। साँस अन्दर जाये और बाहर आये। इससे तुम्हारी हानि क्या है?

यह बता दिया कि संसार में सुख की अधिकता है। दुख की कमी है। प्रकाश अधिक व अन्धेरा कम है। जीवन अधिक मृत्यु कम है। फिर भी तुम नहीं समझते।

९—तस्वीर वह अच्छी होती है जिसमें लाइट और शेड दोनों ही होते हैं। लाइट प्रकाश है और शेड अन्धेरा है। दोनों मिल-मिलाकर सुख और खुशी की तस्वीर बनाते हैं।

यह कैसे सम्भव है कि साँस बाहर की ओर बराबर निकलती ही रहे और अन्दर की ओर न लौटे। आँख खुली रहे और बन्द न हो। तुम जागते ही रहो और सोओ नहीं। फिर जीवन क्या होता! भ्रम से बचो असलियत को समझो। राधास्वामी मत इसी के समझाने का सन्देश देता है।

चतुर्थ सन्देश

नित्य और स्वतन्त्र सुख

१—सुख है। सबको सुख की लालसा है। सुख सबको प्राप्त भी है। लेकिन दुनियाँ में हर जगह दुख की बुराई हुआ करती है। दुनियाँ की श्रेष्ठ परिभाषा भी यही मालूम होती है कि वह दुख की बुराई करने का स्थल है। इन बुराइयों के होते हुये साधारण समझ-बूझ वालों की बुद्धि में यह बैठ रहा है कि दुनिया दुख से भरी हुई है और यहाँ दुख ही-दुख है। सुख का नाम निशान तक नहीं है परन्तु मामला इससे उल्टा है।

२—और तो और बड़े बड़े फिलोसफर (दार्शनिक) और धार्मिक लोगों ने इस दुनिया को " दुख सागर " का नाम दे रक्खा है। एक भी आदमी ऐसा नहीं मिलता जो उसे " सुख सागर " कहता हो।

३—अच्छा ! यह केवल दृष्टिकोण की बात है। जो मनुष्य जैसी दृष्टि बना लेता है, जिस विशेष विचार का जैसा अभ्यास कर लेता है और करता रहता है, वह वैसा ही बन जाता है और वैसा ही हो जाता है। अब एक सवाल तो यह है कि यह सुख यदि है भी तो क्षणिक होने का विश्वास होता है। आता है और जाता है। इसका सिलसिला यों ही चलता रहता है। क्या यह नित्य या स्थाई भी हो सकता है ? इसके उपरान्त दूसरा प्रश्न यह है कि अमल या आचरण में अपने अधिकार का नहीं है। इसके प्राप्त करने में परिश्रम और इसके स्थिर रखने में भी परिश्रम करना पड़ता है और फिर भी यह अधिकार में नहीं रहता और न किसी को पूर्णतया यह प्राप्त होता है। अब क्या ऐसा भी कोई उपाय है कि सुख (स्थायी) हो जाये, अपने अधिकार में हो और पूर्ण हो।

४—यह तीन सवाल हैं जो प्राय; लोगों की बुद्धि में आया करते हैं और वे इनका उत्तर चाहते हैं। इन्हें ऐसा उत्तर नहीं मिलता जो सन्तोषजन-

क और विश्वासयोग्य साबित न हो।

यह तीनों सवाल अपनी निस्बती (आपेक्षिक) हैसियत रखते हैं। ऐसे सवाल करने वालों से हम यह पूछते हैं कि क्या तुम अपने आपको नित्य, स्वतन्त्र और पूर्ण समझते हो ?

यदि वे इन साधारण प्रश्नो का उत्तर साधारण ढंग पर दें तो अभी क्षण भर में इन को साधारण तौर पर अन्तिम उत्तर मिल जाय और उन्हें उस उत्तर के सच होने का पूरा पूरा विश्वास हो जाय।

यदि मनुष्य अपने आपको नित्य समझ बैठा है तो उसे नित्य सुख का हक भी प्राप्त होना चाहिये। यदि मनुष्य अपने आपको स्वतन्त्र जानता है तो उसे सुख के स्वतन्त्र या अपने अधिकार में होने में क्या शंसय हो सकता है ?

यदि किसी मनुष्य को पूर्ण विश्वास है कि उसका स्वरुप (जात) पूर्ण है और उसमें कमी नहीं है तो फिर उसका गुरू भी पूर्ण होगा। अपूर्ण न होगा।

जो जैसा है वह वैसा ही है।
जो जैसा कहता है वैसा हो जाता है।
जो जैसा करता है वैसा बन जाता है।
जो जैसा सोचता है वह वैसा ही होकर रहता है।

हर बात मनुष्य के अधिकार में है। कोई ऐसी बात नहीं जो वह न कर सके। पूर्ण मनुष्य के लिये पूर्ण सुख है और उस पर उसका स्वाभाविक अधिकार है।

स्वतन्त्र मनुष्य के लिये स्वतन्त्र सुख है। वह इसका उत्तराधिकारी है और वह उत्तराधिकार कभीं छीना नहीं जा सकता। स्थाई और नित्य आत्मा वाले मनुष्य का सुख भी स्थाई और नित्य है। यह इसका गुण है गुण सदा गुणी के साथ ही रहता है।

इसके विरुद्ध अपूर्ण मनुष्य का सुख अपूर्ण, परतन्त्र का सुख परतन्त्र होगा और क्षणिक या स्थायी जीवन वाले का सुख क्षणिक होगा।

यह तीनों प्रश्नों के तीन उत्तर हैं

परम सन्त हजूर मानव दयाल डा० ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज का बसन्त का

टूर प्रोग्राम

१. २२-१-८४ होशियारपुर से हिसार श्री विजय नरेश s.s.p के लिये प्रस्थान। हिसार फोन न: २३०६

२. २६-१-८४ से इन्दौर। २८-१-८४ तक। (१) श्री मती दयाल पुत्री लीला १३३, धन्वन्तरी नगर। (ii) श्री कुन्जीलाल गोयल, ७३, रविन्द्र नाथ टैगोर मार्ग, इन्दौर। फोन न: ७३२६

३. २९-१-८४ से ३१-१-८४ तक। उज्जैन। श्री वंशीलाल, द्वारका दास गर्ग सरफ १२५ जवाहर बाजार उज्जैन।

४. १-२-८४ से ३-२-८४ तक इटारसी। (i) श्री सुन्दरलाल, अमर जनरल स्टोर मेन बाजार, इटारसी।

५. ४-२-८४ से १५-२-८४ तक। आन्ध्रप्रदेश। हजूर आनन्दराव जी महाराज, १-३-१७ खलासी गुडा, सिकन्द्राबाद।

६. १६-२-८४ से १९-२-८४ तक। बम्बई। (i) श्रीमती निर्मला पण्डित, ३,मात्र छाया, बिल्डिंग जूहू स्कीम, बम्बई। (ii) श्रीमती रुकमणी देवी गोगल, महाराज आफ राज पिपला २१ सुवास मेन एविन्यू सेन्टाक्रूज (बम्बई) फोन न: ५३२३५८.

७. २०-२-८४ से २८-२-८४ तक। लखनऊ, मिश्रिक तीर्थ, कन्नौज, सीतापुर इत्यादि। (i) श्री कृष्ण मोहन तिवारी ८८ गौतम बुद्ध मार्ग लखनऊ (ii) श्री कृष्ण मोहन श्रीवास्तव फकीर सत्संग केन्द्र, खाकी सराय, मिश्रिकतीर्थ॥

८. २९-२-८४ से १-३-८४ तक इलाहाबाद (i) राधास्वामी धाम, गोपी गंज और धाम जिला बनारस

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

(ii) श्री सुमित्रा कुमार सुपरिटे॰
एक्साईज, गौरी भवन, ३९७/१३
मीरापुर इलाहाबाद,

२-३-८४ से मघरहा और (i) डा॰ सत्तनामसिंह खान,
४-३-८४ तक। खानपुर। जिला मिर्जापुर।
(ii) डा॰ मणिरामसिंह मघरहा।

५-३-८४ से बनारस और मधकर वाच कम्पनी कलैक्टोरेट,
६-३-८४ तक। आजमगढ़। आजमगढ़।

७-३-८४ से कानपुर। श्री जे॰ एन॰ शर्मा एन्ड कम्पनी,
८-३-८४ तक। चार्टर्ड एकाउन्टैन्टस बीरहाना रोड, कानपुर।

९-३-८४ से बिलारी। श्री चन्द्र कुमार नोटरी पब्लिक/
११-३-८४ तक। एडवोकेट, बिलारी। जिला मुरादाबाद।

१२-३-८४ बुलन्दशहर। श्री अनुपम सक्सैना, हाऊस नं॰ १३
शेख सराय बुलन्दशहर (यू॰पी॰)

१३-३-८४ से अलीगढ़। मेजर एस॰ डी॰ गोयल, गोविला
१४-३-८४ तक एन्टर प्राइजिज, इन्डेन गैस डिस्ट्रब्यूटर
मन्दिर, अलीगढ़।

१५-३-८४ से मथुरा। श्री ओंकारसिंह रिटायर्ड D. S. P.
१७-३-८४ तक। दयाल फार्म पोस्ट आफिस
औरंगाबाद जिला मथुरा।

१७-३-८४ सायं मथुरा से होशियारपुर के लिए वापिसी।

नोट :—इस प्रोग्राम का विस्तार पूर्वक विवरण और कुछ सम्भव परिवर्तन फरवरी के "मानव मन्दिर" में दिया जायेगा।

सेक्रेटरी "मानवता मन्दिर"
नरायण दास डोगरा।

महासभा

...ह, धार्मिक,
...गी,
...मनोविज्ञान सम्बन्धी
पुस्तकें तथा 'शाही' और 'मोती'
सिलसिले के उपन्यास तथा
परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज
कृत उच्च कोटि की अमूल्य पुस्तकें
मिलती हैं।

पूरा सूचीपत्र मंगायें।

डाक खर्च सब का अलग है।

पुस्तकें रजिस्टर्ड डाक या रेल से
भेजी जाती हैं।

मिलने का पता :—

कार्यालय

मनुष्य बनो

शिव भवन, लेखराजनगर,
अलीगढ़ (उ० प्र०)

ग्राहक सं० 280

श्री Yamjally Junde Rao
V. Tamiji (K)
Po: Tadkal via Pitlam
Dist. MEDAK (AP) 503710

अ० स० सम्पादक— महेशचन्द्र ...
सहसंपादक ...
व्यवस्थापक व प्रकाशक—
श्रीमती मुन्ना मीतल,
शिव भवन, लेखराज नगर
अलीगढ़।

Printed by S. Mittal, Data Dayal Printers, Aligarh